# लिटमस टेस्ट

❑ राजीव ताम्बे

बीस साल पुरानी घटना है यह। पूना में 'आंतर भारती बाल साहित्यकारों का सम्मेलन' था। मैं वहां बंगाल से आए हुए कुछ लेखकों से मिला। उनसे पूछा, '' वे बच्चों के लिए क्या नया लिख रहे हैं ?'' उन्होंने जिस सहजता से जवाब दिया, उससे मुझे एक तमाचा जरूर मिला ! लेकिन मुझे साक्षात्कार भी हो गया !! निजी जिंदगी में मुझे क्या-क्या करना है, इसका साफ रास्ता भी दिखने लगा और अब तक मैं उसी रास्ते पर ही खुशी से चल रहा हूं। मैं उनका शुक्रगुजार हूं।

एक बंगाली लेखक ने कहा, ''अजी, उस रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने तो हमारी गोची ही कर दी है ! हम कुछ भी लिखना चाहें कुछ भी नया प्रयोग करना चाहें तो भी हम कर नहीं पाते ! क्योंकि हमारे पहले ही ठाकुरजी ने वो किया ही है ! और हमसे शतगुना बेहतरीन किया है ! हम उनसे अच्छा क्या कर सकते हैं ?

मानो, ठाकुर जी ने बाल साहित्य के बारे में एक मानदण्ड सा बनाया है, ''न ही हम उस हद तक जा सकते हैं, न ही उसे पार कर के आगे जा सकते हैं ! यही तो गोची है।

लेकिन बेटे, क्या तुम्हारी मराठी भाषा में, ऐसा ठाकुर जी जैसा कोई लेखक है, जो तुम्हारी गोची कर सकता है ?''

उस वक्त मैं उनको जवाब नहीं दे पाया। इसका एक कारण ये था कि, जवाब तो उनको मालूम ही था इसलिए उन्होंने ये गुगली बॉल मुझ पर छोड़ी थी! और सही कारण ये था कि मैं अंतर्मुख हो गया था। कम से कम अवधि में मुझे कितना ढेर सारा काम करना है ? समझा।

टैगोर जी के साहित्य का अभ्यास करने के बाद मुझे पहला साक्षात्कार हुआ कि, अब तक बाल साहित्य में शिक्षा का होना अनिवार्य भाग था। सिखाने की जबरदस्ती थी। इतना ही नहीं, बच्चे नासमझ हैं, ऐसी धारणा से ही उन पर शिक्षा का बोझ डाला जाता था। जैसे कि शरीर कहानी का या कविता का, लेकिन उसकी आत्मा शिक्षा की ! बच्चे शरीर को भूलकर कहानी को अपनाते और फंस जाते !! क्योंकि उसकी आत्मा ही बच्चों पर हमला करती ! टूट पड़ती !

टैगोर जी का सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान ये है कि उन्होंने 'शिक्षा में ही बाल साहित्य का समावेश किया। शरीर शिक्षा का, लेकिन उसकी आत्मा है कहानी, कविता, चुटकुले ! हमेशा ही बच्चों का नाता आत्मा से होता है, शरीर से नहीं !! बच्चे कहानी, कविता पढ़ते; पढ़ते हुए उन्हें समझता ही नहीं कि, वो कब और कैसे सीखे ! (सदंर्भ : सहज पाठ)

साहित्य, इस शब्द के अनेक अर्थ होते हैं। उसमें से एक है 'जो हितकारी है' और दूसरा, 'जो साथ चलता है'। अब तक कुछ बाल साहित्यिक बच्चों के सामने खड़े होकर या तो उनको आशीर्वाद देते थे, या अपनी ही मस्ती में लिखकर बच्चों से दूर भागते थे।

आशीर्वाद देने की भूमिका से लिखना यानी बच्चों से दूरी

बढ़ाना, अंतर बढ़ाना। ''मैं देने वाला हूं, मैं संस्कार करता हूं'' इस सोच से अच्छा बाल साहित्य नहीं निर्मित होता। न ही अपनी मस्ती को प्रमाण मानकर होता है । किसी भी प्रकार का अभिनिवेश यह अच्छे बाल साहित्य का लक्षण ही नहीं होता!

अच्छे बाल साहित्य के मानकों में से प्रमुख मानक ये हैं कि, 'क्या लेखक और उसका साहित्य बच्चों के साथ-साथ चलता है ? क्या उसकी भाषा बच्चों को अपनी लगती है ? बच्चों के परिवेश में होने वाली घटनाओं पर, आपस में जुड़े हुए मानवीय संबंधों पर क्या लेखक बच्चों के नजरिए से भाष्य करता है ? और क्या उस लेखक के अंदर, वो बच्चा जाग रहा है, जिसके लिए वो लिख रहा है ?' अगर इन सभी सवालों का जवाब हां है, तो फिर उस साहित्य से बच्चों को आनन्द तो मिलता ही है लेकिन उसके साथ, उनकी सोच बदलती है, नई बातें जान लेने की उमंग बढ़ती है, हौसला बढ़ता है ! उस लेखक के साथ चलने की बच्चों की उम्मीद भी बढ़ती है।

हैरी पॉटर का जन्म होने के बाद जब उसकी पहली किताब करोड़ों की तादाद में बिक गई, तब भी कुछ बाल साहित्यिक नकारात्मक दृष्टि से सोच रहे थे कि, 'यह तो एक चमत्कार है ! बार-बार होने वाली घटना नहीं है ! अजी मीडिया का सपोर्ट है, इसलिए यह सब नाटक चल रहा है ! लगातार 700 पन्ने बच्चे तो हरगिज नहीं पढ़ते।

सच कहें तो, उस वक्त वास्तविकता को स्वीकार करने की उनकी हिम्मत नहीं हो रही थी। उन्हें लगता था, बच्चे देशी हों या विदेशी, उनकी अभिरुचि सिर्फ वे ही जानते हैं। अगर उनके लिखे हुए बाल साहित्य की डिमांड नहीं है, इसका साफ अर्थ ये है कि पूरे विश्व में भी यही परिस्थिति है!

वे लोग, अपने ही बनाए हुए दायरों में रहकर खुशियां मनाते रहे, खुद को समझाते रहे कि, यही है विश्व साहित्य का आंगन ! लेकिन 'चौबीस घंटे कोई भी नहीं लगा सकता काला चश्मा!' ऐसी एक चीनी कहावत है।

लेकिन आज जब सारा समाज पूछने लगा 'कहां है हमारी भाषा का हैरी पॉटर ? क्यों नहीं ? कब आएगा ? तब मानो, 'उन बाल साहित्यिकों' में दो पंथ से हो गए।

एक, जिन्होंने अपना चश्मा उतार कर, हैरी पॉटर की बालप्रियता और लोकप्रियता का रहस्य खोजने की कोशिश की। दूसरे, जो भूल ही गए कि उन्होंने काला चश्मा लगाया था। उन्हें लगने लगा कि वही उनकी आंखें हैं !! (इस दूसरे पंथियों के बारे में लिखकर, मैं मेरा और आपका समय बरबाद नहीं करता।)

तो पहले हम ये जानने की कोशिश करेंगे कि हैरी पॉटर की विशेषता क्या है ?

हैरी पॉटर की इमारत टॉम एण्ड जेरी और पोकेमान के मजबूत फाउंडेशन पर खड़ी है!!

छोटे बच्चे टॉम एण्ड जैरी को ज्यादा एंजॉय करते हैं, इसके तीन प्रमुख कारण हैं। एक टॉम एण्ड जेरी उनके जैसे ही नन्हे-मुन्ने हैं। वैसे ही वे शरारती हैं। कभी-कभी टॉम एण्ड जेरी हारते जरूर हैं, लेकिन बहुत दफे वे जीतते ही हैं। उन बच्चों के बारे में कुछ ऐसा ही होता है। सिर्फ इतना ही कि, बच्चों की जीत कभी-कभी बड़ों की नजर से 'हार' होती है !

दूसरा कारण टॉम एण्ड जैरी कभी भी उनसे छोटे प्राणियों से झगड़ते नहीं, लड़ते नहीं, न ही कभी उनको सताते ! टॉम एण्ड जैरी हमेशा उनसे बड़े, शक्तिवान, ताकतवान और मोटे प्राणियों से ही झगड़ते हैं, उनके सामने जाकर खुले आम उनसे पंगा लेते हैं ! और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ये टॉम एण्ड जैरी कभी भी उन बड़े प्राणियों के पीछे नहीं भागते, न ही उनको कभी मनाते !! लेकिन ये टॉम एण्ड जैरी ऐसी हरकतें करते हैं, शरारतें करते हैं कि उन बड़े प्राणियों को मजबूरी से उनके पीछे भागना पड़ता है; और हाथ न आने पर उनकी होशियारी की तारीफ करनी पड़ती है !! बच्चे अपने मन से सचमुच यही चाहते हैं।

तीसरा कारण, साफ और सरल है। टॉम एण्ड जैरी हमेशा अपनी अक्ल का, होशियारी का ही उपयोग करते हैं, चाहे सामने वाला कितना भी बड़ा हो ! चाहे समस्या कितनी भी कठिन हो, टॉम एण्ड जैरी गलत ढंग का इस्तेमाल नहीं करते। और अगर सामने वाला गलत ढंग का इस्तेमाल कर रहा हो, तो अपनी होशियारी से उस की मात कर देते हैं। इससे बच्चों को ये मैसेज मिलता है कि, 'अगर मैं अक्ल-होशियारी से काम लूं तो मैं भी किसी भी समस्या को हल कर सकता हूं।'

जहां से टॉम एण्ड जैरी देखने वालों का गट खत्म होता है वहां से पोकेमान का गट शुरू होता है। इन दोनों में एक महत्त्वपूर्ण फर्क ये है कि, टॉम एण्ड जेरी कुछ भी काम कर सकते हैं और किसी भी चीज से नहीं डरते; जैसे आग, पानी, बिजली, तूफान आदि।

लेकिन अलग-अलग पोकेमान की अलग-अलग विशेषता है। कोई बिजली से डरता है, तो कोई पानी से, इतना ही नहीं, किसी का प्लस पॉइंट बिजली है तो किसी का अंगार ! पोकेमान की और एक खासियत है कि, बच्चों की तरह यह विकसित होता है। इसमें जादू है, रहस्य है, यह एक अनोखी फंतासी है ! इस

फंतासी में पोकेमान बिल्कुल बच्चों की तरह है। छोटे-छोटे पोकेमान जादू के बाद महाकाय भी हो जाते हैं, साहसी हो जाते हैं। 'दिखने में छोटे, लेकिन काम में मोटे!'

बड़े लोग ज्यादातर कार्टून देखना इसलिए पसंद नहीं करते, क्योंकि, किसी भी कार्टून फिल्म में, घटनाओं की रफ्तार बहुत तेज है और 'और अगले क्षण क्या होगा ? ये जानना उनके लिए मुश्किल-सा है ! लेकिन बच्चों के लिए आसान !!

इसकी भी दो वजह हैं। एक, इस बारे में बच्चों की सोच और सोचने की गति बड़ों से अधिक होती है। घटनाओं की तेज रफ्तार से बच्चे अपना समायोजन कर सकते हैं, लेकिन बड़े नहीं !

दूसरी वजह है कि, 'अपेक्षित अंत की आशा रखने वाले लोग कार्टून नहीं देख सकते।' ये लोग सिर्फ 'क से शुरू होने वाली मलिकाओं' को ही पसंद करते हैं। बच्चों के मन में पूर्वाग्रह नहीं होता क्योंकि अपेक्षा भी कम होती है और वे कहानी के साक्षी रहते हैं, उसे जानने की कोशिश करते हैं; सच कहें तो यह उनकी सहजता है !

हैरी पॉटर में तो ये अद्‌भुत रसायन है ही, लेकिन उसके बावजूद उसमें कुछ ऐसी खूबियां हैं जो सबको मत्त कर देती हैं। किसी भी कथा या कादंबरी (उपन्यास) का शरीर होता है उसका प्लॉट और आत्मा होता है उसका कथाबीज। इसकी खासियत ये है कि इसका प्लॉट 'वास्तविकता से जुड़ा हुआ है। लेकिन इसकी कथाबीज बिल्कुल फंतासी है!' ये अनोखा रसायन बच्चों का मन लुभाता है। क्योंकि, फंतासी और वास्तविकता के बीच में जो सीमा रेखा है उसे पहचानने का अवसर (पेस) कथा लेखिका उस कथा में ही बच्चों को देती है।

हॅगवॉर्ड का जादूई स्कूल यह हमारे ही स्कूलों की प्रतिकृति है। इस स्कूल में होने वाली घटना जरूर फंतासी से संबंधित है, लेकिन इससे मिलने वाला मैसेज बच्चों के भाव विश्व से, उनकी वास्तविकता से संबंधित है, जुड़ा हुआ है। चाहे बच्चे विश्व में कहीं भी रहते हों ! इसलिए हैरी पॉटर ये स्वप्नरंजन नहीं है, न ही पलायनवाद। ये एक जानदार वैश्विक साहित्यकृति है !

मैं व्यक्तिश: सभी पाठ्यपुस्तक मंडलों को धन्यवाद देना चाहता हूं, कि 'वे हैरी पॉटर जैसी महान और बालप्रिय साहित्यकृति के कुछ अंश, अपनी-अपनी भाषा की पाठ्यपुस्तकों में समाविष्ट नहीं कर रहे हैं। बच्चों में बाल साहित्य के प्रति अरुचि पैदा करने का सर्वाधिक श्रेय हमारी पाठ्यपुस्तकों को ही है। और ये मैं शपथपूर्वक इसलिए कहता हूं कि, मैं एक मिसाल के तौर पर, यह सब नजदीक से देख रहा हूं। महाराष्ट्र में पाठ्यपुस्तकों का नाम बालभारती है। मराठी, गुजराती, हिंदी, तेलगू ऐसी कई भाषाओं में बालभारती प्रकाशित होती है। मराठी के लिए निमंत्रित (निमंत्रित का मतलब है, विशेष अधिकारी की मर्जी है तो निमंत्रण है। उनकी मर्जी खप्पा हो गई तो निमंत्रण नहीं है।) के स्तर पर मैं काम कर रहा हूं। मराठी के विशेष अधिकारी श्री. माधवराव राजगुरू हैं।

बालभारती के (मराठी विभाग के) एक पॉलिसी के ऊपर मैं, आप सभी शिक्षाकर्मियों का ध्यान खींचना चाहता हूं । मराठी बाल भारती (बाकी भाषाओं की कार्यपद्धति मुझे मालूम नहीं।) जब किसी लेखक की कविता, लेख या कहानी चुनती है तो उसे एक खत भेजती है। इस खत के जरिए, साहित्य प्रकाशित करने के लिए बालभारती चाहे तो उसमें बदलाव करने के लिए लेखक से अनुमति ली जाती है। यह अनुमति मिलने के बाद (कभी-कभी इसके पहले भी) हमारे 'मराठी के राजगुरू' उस कथा/कविता में मनचाहे बदलाव कर देते हैं और उसे तुरंत प्रकाशित कर देते है ! जो लेखक ने कभी लिखा ही नहीं, इसके बारे में स्वप्न में सोचा ही नहीं, ऐसा कुछ साहित्य 'राजगुरू कृपा से' उस लेखक के नाम पर प्रकाशित होता है। ऐसा सालों-साल चल रहा है। क्या यह नैतिक है ?

महाराष्ट्र के महान कवि विंदा करंदीकर को भी राजगुरू ने

अपना झपाटा दिया है। (संदर्भ : सुलभ भारती 2001) तब से महाराष्ट्र के चालीस लाख बच्चे ऐसी कविता पढ़ रहे हैं जो कभी विंदा करंदीकर ने लिखी ही नहीं, पर नाम तो उनका ही है। यह कविता पाठ्यपुस्तक में प्रकाशित होने के बाद अखबारों में गजब हुआ था। लेकिन पाठ्यपुस्तक मंडल ने राजगुरू को निलंबित नहीं किया बल्कि 'राजगुरू परंपरा' शुरू रहने के लिए उसे मानो आशीर्वाद ही दिया !!

बालभारती को लेखक के साहित्य में बदलाव करने की अनुमति लेखक जरूर देता है। लेकिन बदलाव करने के बाद, किया हुआ बदलाव उस लेखक/कवि को बताना/ इस बदलाव के लिए उसकी अनुमति लेना और अगर बालभारती का किया हुआ बदलाव लेखक को पसंद नहीं है, तो उसकी साहित्यकृति उसे सम्मानपूर्वक वापस कर देना, यह नैतिकता है !

लेखक/कवि की अभिव्यक्ति स्वतंत्रता को कीमत देना, उसकी सर्जनशीलता का सम्मान करना यह नैतिक है !! किया हुआ बदलाव उस लेखक/कवि को बिना पूछे, उसी के नाम पर प्रकाशित करना ये सरासर अवैध है ! इस 'राजगुरू परंपरा' से मैं तो बिल्कुल व्यथित हूं, आप को क्या लगता है ?

'राजगुरू' ये एक प्रवृत्ति है ! किसी भी पाठ्यपुस्तक मंडल में ऐसे राजगुरू हो सकते है। स्वाभिमानी बाल साहित्यिकों को उनसे बचके रहना चाहिए।

बच्चों में बाल साहित्य के प्रति अरुचि पैदा करने का सर्वाधिक श्रेय जो हमारी पाठ्यपुस्तकों को मिलता है इसके तीन प्रमुख कारण है। एक, 'राजगुरू वायरस' के बारे में ऊपर लिखा ही है।

दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण है, 'पाठ्यांश के नीचे दिए हुए स्वाध्याय !' जैसे सर्जनशील लेखक/कवि होते हैं, मुझ पर विश्वास कीजिए, वैसे ही 'असर्जनशील स्वाध्यायियों की' एक फौज पाठ्यपुस्तक मण्डल के पास तैनात रहती है, इन स्वाध्याय फौजियों को विशेष रूप से प्रशिक्षण दिया जाता है ताकि उनका संबंध सुंदरता, अच्छे बाल साहित्य का आस्वाद लेने की क्षमता, योग्यता, और बच्चों की सोच बढ़ाने की गतिविधियां इससे हरगिज न आएं!

मैं अलग तरीके से स्वाध्याय बनाना चाहता था। जैसे कि उस में बहु-आयामी प्रश्न होंगे। और वे प्रश्न पाठ की संहिता पर नहीं बल्कि उसके आशय पर निर्भर होंगे। क्लास के हर बच्चे के पास उसका सवाल होगा। और ये प्रश्न स्मरणशक्ति पर नहीं बल्कि आकलन क्षमता पर आधारित होंगे। लेकिन ये मौका मुझे नहीं मिल सका, क्योंकि उन फौजियों में घुसने के लिए आवश्यक पासवर्ड मेरे पास नहीं था।

उदाहरण के तौर पर : पाठ में लिखा है, 'गजानन एक चमड़े का चौरस बैग लेकर ऑफिस में जा रहा है।' इस वाक्य के ऊपर हमारे 'स्वाध्याय फौजियों' ने निम्न लिखित स्वाध्याय बनाया :

- गजानन कहां जा रहा है ?
- गजानन के पास कितने बैग हैं ?
- ऑफिस में कौनसा बैग ले जाते हैं ?
- चमड़े के बैगों का आकार कैसा होता है ?
- बैग कौन ले जा रहा है ?

सोचिए एक वाक्य के ऊपर ऐसे प्रश्न बन रहे हैं तो पूरे पाठ के ऊपर कैसे स्वाध्याय बनता होगा ? और बच्चों पर क्या बला गुजरती होगी ? न ही इसमें सर्जनशीलता है, न ही है बच्चों की सोच बढ़ाने की कोशिश, न ही हैं कोई गतिविधियां और जिन्होंने सिर्फ पाठ की रटाई की है, वो ही 'रट्टेवीर' उन सवालों का जवाब दे सकते हैं । बाकी बच्चे बिल्कुल खामोश !!

इसी वाक्य पर अगर स्वाध्याय बनाना ही हो, तो फिर वो ऐसा होना चाहिए :

- कौन-कौनसी सामग्री से बैग बन सकते हैं? जैसे जूट, नायलॉन, कपड़ा।
- ऑफिस में ले जाने के लिए, सब्जी लाने के लिए, तेल लाने के लिए और ऐसे कौनसे बैग के प्रकार तुम्हें मालूम हैं ?
- हम एक ही बैग अलग-अलग काम के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं ? कैसे ?
- बैग के कौन-कौन से आकार तुम्हें मालूम हैं ? जो आकार तुम्हें पसंद हैं उसका आकार अपनी कॉपी में निकालो।
- पुराना अखबार लेकर, अलग-अलग आकार में उससे थैली बनाना, बाद में उसे कलर करना/उस पर डिजाइन निकालना स्वयं ही सीख लो। (सीखने के लिए किसी की भी मदद लो।) उसकी अच्छी प्रदर्शनी अपने क्लासरूम में लगाओ।

'स्वाध्याय फौजियों' के स्वाध्याय से बच्चे पकते हैं ! और फिर स्वाध्याय सुलझाने के लिए, गुण मिलने के लिए बच्चे पाठ्यांश पढ़ते हैं, रटते हैं!! रुचि से, आनंद मिलने के लिए वो पाठ कभी

भी नहीं पढ़ते। या टर्म खत्म होने के बाद फिर कभी उस पाठ की तरफ नजर भी नहीं डालते। क्योंकि उस पाठ के प्रति उनके मन में घृणा पैदा होती है। और इसके साथ हमारे 'स्वाध्याय फौजियों' का मिशन भी पूरा होता है !!

तीसरा महत्त्वपूर्ण कारण है प्रयोगशीलता का अभाव और मानसिकता ! समकालीन शिक्षाकर्मियों का, बाल साहित्यिकों का योगदान जानकर, उनकी सहायता से, आने वाले पांच साल का अंदाज लगाकर तैयार होने वाली चीज पाठ्यपुस्तकों में चाहिए। और पाठ्यपुस्तक बच्चों के जीवन से, उनके दायरों में घटने वाली घटनाओं से जुड़ी हुई होनी चाहिए। नहीं तो पाठ्यपुस्तक एक 'रट्टा मारने का साधन' बन जाती है। क्या बीस साल पहले जैसी पाठ्यपुस्तक थीं वैसी ही आज हैं ? या इसमें कुछ सकारात्मक बदलाव हुआ है ? कितनी प्रयोगशील हैं ये ? इसमें रटाई है या सोचने का मौका है ? याद करके लिखना है या सोचकर कुछ काम करना है ? क्या गणित की किताब में ऐसी कुछ कहानियां हैं, जो अंकों से संबंधित हैं ? घर/स्कूल में दीवार पर लगे हुए कलैण्डर के मदद से भी भाषा, गणित, भूगोल और विज्ञान सीखना हमारे लिए कितना आसान है, ऐसी उम्मीद बच्चों के मन में क्या पाठ्यपुस्तक ने जगायी है ? और अंत में, किसी भी पाठ्यपुस्तक मण्डल के अधिकारी 'पाठ्यपुस्तक को तैयार करना' इसको अपना सिर्फ शासकीय काम मानते हैं, या बच्चों के प्रति लगन ? आखिर सवाल मानसिकता पर ही निर्भर करना है।

दुनिया में ऐसा कोई भी विषय नहीं है, जो बाल साहित्य में प्रस्तुत नहीं हो सकता ! सवाल इतना ही है कि हम इस विषय को किस तरह से पेश कर रहे हैं। कौनसे आयुगट को सामने रखकर हम उसे कौनसी भाषा/फॉर्म में पेश करते हैं ? फिर विषय वर्गीय समाज का हो या सेक्स का हो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, ज्वलंत वास्तविकता भी बिल्कुल सरलता से बच्चों के सामने पेश करने में कोई दिक्कत नहीं है; लेकिन उस वक्त बच्चों को यह अहसास दिलाना होगा कि 'अपना मत, विश्वास और अपना कार्य वास्तविकता को बदल सकता है। और वास्तव में सकारात्मक बदलाव करने वाले महापुरुषों की पहचान उतनी ही सहजता से उन्हें समझनी चाहिए।

जैसे एक जमाने में महिलाओं को सीखने का मौका ही नहीं था। 'महिलाएं सीख नहीं सकतीं', ऐसा समाज का मानना था। ये उस जमाने का सच था। महात्मा ज्योतिबा फूले का मत था महिलाओं को सीखना चाहिए ! उनका विश्वास था, महिलाएं सीख सकती हैं। फिर उन्होंने अपनी पत्नी को पहले सिखाया और दोनों ने मिलकर लड़कियों के लिए पहली स्कूल शुरू की ! वो वास्तव में बदलने में कामयाब हो सके !!

एक बात समझ लेनी चाहिए कि, ''बच्चों के लिए सहज-सरल लिखना, पूर्वधारणा से छूटकर लिखना, साफ सकारात्मक दृष्टि से लिखना; और ये सब लेखन बच्चों के भविष्य से, उनकी निजी जिंदगी से मिल-जुलकर होना... ये बहुत कठिन काम है !!!''

ये काम इसलिए कठिन है कि, किसी भी घटना को देखने का, उसे समझने का, बच्चों का आयाम और हमारा बड़ों का आयाम इसमें बहुत फर्क है ! और किसी भी घटना को बच्चों के नजरिए से देखना, उसे समझ पाना, उससे सीखना ये शक्ति सबके पास नहीं होती !! ये कठोर परिश्रम के बाद कमायी हुई शक्ति एक क्षण में पिघल जाती है ! और तत्क्षण बच्चे उससे दूर जाते हैं!!

जो बाल साहित्यिक अपनी कमाई हुई शक्ति की बार-बार 'लिटमस टेस्ट' करने की हिम्मत करता है; और अगर रिजल्ट नकारात्मक आने की संभावना लगे तो, खुद में बदलाव लाकर उसे सकारात्मक की ओर ले जाता है; वो ही अच्छा बाल साहित्यिक है।

क्योंकि, सिर्फ अपने कमरे में बैठकर कोई भी नहीं लिख सकता बच्चों के लिए। जो अजनबी बच्चों से भी बातें कर सकता है, बच्चों को सिखाने के बजाय उन्हें समझ लेने की और उनसे सीखने की कोशिश करता है; जो ये जानता है, हर बच्चा अलग है, हर बच्चा अलग-अलग तरीके से सर्जनशील है, बच्चे जो चाहे वो कर सकते हैं ऐसी उमंग, ऐसा हौसला जो बच्चों के मन में जगाता है, वो ही बच्चों के लिए लिख सकता है !! सारांश में, 'जो बच्चों से झुककर नहीं बल्कि उनके कंधों पर मैत्री का हाथ रखकर बात करता है और बच्चों को भी उनके प्रति विश्वास है' वो ही बाल साहित्यिक हैं !!

इसलिए इसका 'लिटमस टेस्ट' बिल्कुल आसान है। 'बाल साहित्यिक, बाल शिक्षाकर्मी कभी भी खुद को अकेले महसूस नहीं करते क्योंकि उनके अंदर वो बच्चा जग रहा है, जिसके लिए वो लिखते हैं/काम करते हैं। जब कोई अजनबी बच्चा उनसे मिलता है, तो वो बच्चा उसका लिटमस टेस्ट महसूस किया है ?

चाहे आपका लिटमस टेस्ट ही अलग हो; या उसका रिजल्ट कोई भी हो। लिटमस टेस्ट करने की हिम्मत करने वाले दोस्तों से मुझे मैत्री करनी है। मैं आपके हिम्मतबाज खतों का इंतजार कर रहा हूं। ◆